International Journal of Sanskrit Research 2016; 2(2): 06-09

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2016; 2(2): 06-09
© 2016 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 07-01-2016
Accepted: 09-02-2016

डॉ. सोमवीर
असिस्टेंट प्रोपेफसर, संस्कृत विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली–07

डॉ. सुशील कुमारी
असिस्टेंट प्रोपेफसर,
संस्कृत विभाग, मैत्रोयी महाविद्यालय
(दिल्ली विश्वविद्यालय)

Correspondence
डॉ. सोमवीर
असिस्टेंट प्रोपेफसर, संस्कृत विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली–07

यास्काचार्य का काल निधारण : एक पुनराकलन

डॉ. सोमवीर, डॉ. सुशील कुमारी

वेदों का ठीक-ठीक उच्चारण और उनका सही तात्पर्य समझने के लिए ही वेदाङ्गों का प्रादुर्भाव हुआ है। वेद के छः अङ्ग हैं। पाणिनीय शिक्षा में कहा गया है कि-

छन्दः पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते,
ज्योतिषामयनं चक्षुर्निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते।
शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम्,
तस्मात् साङ्गमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते।।[i]

अर्थात् छन्दःशास्त्र वेद के पैर हैं, कल्पशास्त्र वेद के हाथ हैं, ज्योतिषशास्त्र वेद के नेत्र हैं, निरुक्तशास्त्र वेद का कर्ण (कान) है, शिक्षा वेद का घ्राण (नासिका) है और व्याकरणशास्त्र वेद का मुख है। इस कारण अङ्गों सहित वेद को अध्ययन करके ही ब्रह्मलोक में प्रतिष्ठित होता है।

जिस प्रकार हस्त, पादादि इन्द्रियाँ अपने-अपने कर्म में स्वतन्त्र हैं तथा उनमें एक इन्द्रिय का कार्य दूसरी इन्द्रिय से नहीं हो सकता, उसी प्रकार 'निरुक्त' शास्त्र भी जो वेदपुरुष के श्रवण इन्द्रिय के स्थान में विराजमान है, अपने कार्य में स्वतन्त्र एवं मुख्य है। अतः निरुक्त वेद का अंगभूत शास्त्र है।

निरुक्तकार आचार्य यास्क का काल क्या था? इस विषय में विद्वानों ने बहुत परिश्रम किया है किन्तु सही अर्थों में आज तक समाधान नहीं हो पाया है।

निरुक्त परिशिष्ट के दूसरे अध्याय के अन्त में नमः पारस्कराय। नमो यास्काय।[ii] कहकर पास्कार और यास्क को नमस्कार किया गया है। ये दोनों वाक्य यास्ककृत नहीं है। कोई स्वयं को नमस्कार नहीं करता। अतः यह निश्चित है कि ये वाक्य अवश्य ही यास्क के किसी प्राचीन श्रद्धालु ने ही इसमें जोड़े है। इसकी प्राचीनता इसलिए नहीं है, क्योंकि ये वाक्य मूल की सब पाण्डुलिपियों में निरुक्त के अन्तरङ्ग भाग के रूप में ही लिखित है।[iii]

आचार्य पाणिनि[iv] ने 'पारस्कर' को एक विशिष्ट संज्ञा शब्द बतलाया है।[v] 'पारस्करप्रभृतीनि च संज्ञायाम्' (अ. 6.1.157) सूत्र के भाष्य में महाभाष्यकार आचार्य पतञ्जलि[vi] ने कहा है कि 'पारस्करो देशः'। पारस्कर भारत के एक प्रदेश का नाम है।[vii] देश नाम से भी व्यक्तियों के नाम हुआ करते हैं। यास्क 'पारस्कर' देशवासी थे। न्यासकार जिनेन्द्रबुद्धि ने इसकी व्युत्पत्ति पारं करोति इति पारस्करः [viii] की है। इससे विदित होता है कि यह कोई ऐसा प्रदेश है जिसे पार करना इतना कठिन है कि इसके आधार पर ही उस प्रदेश का नाम पड़ गया। 'यास्क' यह नाम इनका गोत्र नाम है- यस्कस्य गोत्रापत्यं यास्कः। असली नाम क्या था इसका अभी तक पता नहीं लग सका। [ix]

सम्भवतः परिशिष्ट में उल्लिखित ये पारस्कर यास्क ही है। यास्क का उल्लेख भी यहाँ निरुक्त का प्रणेता होने से ही हुआ है। प्रथम शताब्दी ई. के आस-पास में पारस्कर से अनतिदूर गुजरात के क्षेत्र में यास्क के विशेष अध्ययन की परम्परा थी। इसका परिचय जम्बूसर (प्राचीन नाम जम्बूमार्ग तथा जम्बू मार्गाश्रम, आबूपर्वत के समीप) में आचार्य दुर्ग द्वारा निरुक्त की सुन्दर टीका लिखे जाने से मिलता है।[x] आचार्य स्कन्धस्वामी का स्कन्धभाष्य भी उससे अनतिदूर वल्लभी में लिखा गया था। इससे सिद्ध होता है कि वह सारा क्षेत्र निरुक्त के साथ घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित रहा है।

निरुक्त के प्रणेता यास्क हैं, शौनक के बृहद्देवता नामक ग्रन्थ में इसका प्राचीनतम प्रमाण मिलता है। शौनक को यास्क के ग्रन्थ से गहरा परिचय है। इन्होंने यास्क का नाम लेकर निरुक्त के बहुत से स्थलों को उद्धृत किया है और बहुत सी यास्क प्रतिपादित बातों की आलोचना, समर्थन एवं खण्डन किया है। आचार्य शौनक यास्क और पाणिनि के मध्य में हुए।[xi] अतः उनके साक्ष्य का ऐतिहासिक महत्त्व बहुत अधिक है।[xii]

प्राचीन साहित्य में 'यास्क' नाम सबसे पहले शतपथ ब्राह्मण के वंशब्राह्मण में दो बार आया है।[xiii] उसके बाद के प्राचीन ग्रन्थों में पाणिनि की अष्टाध्यायी और गणपाठ में एक-एक बार[xiv] और बृहद्देवता में 20 बार आया है।

शतपथ और पाणिनि के ग्रन्थ में उल्लेख 'यस्क गोत्र' के किसी व्यक्ति के बारे में है, केवल इतना ही निश्चित है। वे यस्कगोत्रज पुरुष निरुक्तकार हैं कि नहीं, इसके साधक या बाधक कोई भी प्रमाण हमें उपलब्ध नहीं होता। एक दृष्टि से एक ही सामग्री का अध्ययन करने वाले भिन्न-भिन्न विद्वानों ने भिन्न-भिन्न निष्कर्ष निकाले हैं। मेक्समूलर, भूतलिङ्ग तथा पाश्चात्य विद्वानों के मत से प्रभावित श्री सत्यव्रत सामश्रमी आदि विद्वान् यास्क को पाणिनि के बाद का मानते हैं, तथा श्रीयुत थियोडोर गोल्डस्टुकर, मेक्डानल, डॉ. वेल्वल्कर आदि विद्वान् यास्क को पाणिनि से प्राचीन मानते हैं।[xv]

मेक्समूलर का कथन है कि वाजसनेय प्रातिशाख्य में पदों के चार विभाग बताने के साथ-साथ नामपदों का कृदन्त, तद्धितान्त तथा चार प्रकार के समास के रूप में विभाग किया गया है।[xvi] निरुक्त में इस वर्गीकरण को अपर्याप्त समझ कर सब नामपद आख्यातज होते हैं यह एक नया सिद्धान्त खड़ा किया गया है। यास्क प्रातिशाख्यकार कात्यायन से अर्वाचीन है तथा प्रातिशाख्यकार कात्यायन और पाणिनि के आलोचक वार्तिककार कात्यायन एक ही व्यक्ति है।[xvii] अतः भाषाशास्त्र के विकास के सुदृढ़ धरातल पर खड़े किए मेक्समूलर के मत में यास्क पाणिनि से अर्वाचीन कात्यायन से भी परवर्ती है।

मेक्समूलर के कथन के उत्तर में यह कहना उचित होगा कि सब नामपद आख्यातज होते हैं यह सिद्धान्त मूलतः शाकटायन आचार्य का है, यह तो वे भी मानते है[xviii] तथा निरुक्त की पंक्तियाँ भी इस विषय में प्रमाण हैं।[xix] तो क्या शाकटायन भी कात्यायन के बाद के हैं? शाकटायन का अनेक बार नामोल्लेख करने वाले आचार्य पाणिनि भी तब तो उनके अपने सूत्रों पर वार्तिक लिखने वाले कात्यायन के बहुत बाद में ही हुए होंगे?[xx] अतः यह एक अनर्गल कल्पना मात्र है।

पण्डित सत्यव्रत सामश्रमी जी यास्क को कात्यायन से प्राचीन पर पाणिनि से परवर्ती मानते हैं। उनके तर्कों का प्रमुख आधार यही है कि पाणिनि ही आदिम व्याकरण के प्रणेता हैं, अतः निरुक्त में जहाँ कही व्याकरण शब्द या व्याकरण की पारिभाषिक शब्दावली आई है तो वह उस आदि व्याकरण से ही ली गई है।[xxi] उनका यह आधार ही आज के विद्वन्मण्डल को अमान्य होगा।[xxii]

यास्क ने 'सूर्या-सूर्यस्य पत्नी'[xxiii] कहा है। पाणिनि व्याकरण में इस अर्थ में सूर्या नहीं बनता सूरी बनता है।[xxiv] यदि पाणिनि यास्क के परवर्ती होते अवश्य सूर्या के लिए कुछ उपाय करते, जैसे कि पाणिनि के बाद आने वाले कात्यायन ने 'सूर्या' शब्द के लिए वार्तिक सूर्याद्देवतायां चाब्वाच्यः[xxv] बना दिया।

विष्णुपद भट्टाचार्य का मानना है कि पाणिनि ने बहुत सी उपधा, लोप, गुण, वृद्धि, अभ्यास आदि संज्ञाओं का पारिभाषिक अर्थ निश्चित करके उनका अपने व्याकरण में प्रयोग किया है। इससे सिद्ध होता है कि ये संज्ञाएँ पाणिनि से पूर्व इन अर्थों में प्रसिद्ध नहीं थी। यास्क ने अपने निरुक्त में इनमें से बहुत-सी संज्ञाओं का इन्हीं अर्थों में उपयोग किया है, तथा उनका अर्थ कही भी स्पष्ट नहीं किया। इससे सिद्ध होता है कि यास्क के समय तक ये संज्ञाएँ पारिभाषिक अर्थ में रूढ हो चुकी थी तथा यास्क ने पाणिनि के द्वारा रूढ की गई संज्ञाओं का अपने ग्रन्थ में प्रयोग किया है। अतः विष्णुपद भट्टाचार्य के मत में पाणिनि यास्क से प्राचीन है।[xxvi]

विष्णुपद भट्टाचार्य का मत उचित नहीं है। यास्क के द्वारा निरुक्त में प्रयुक्त व्याकरण की पारिभाषिक शब्दावली रचना तथा भाव की दृष्टि से पाणिनि की शब्दावली से बहुत भिन्न प्रकार की है तथा पारिभाषिक संज्ञाओं के पाणिनि से प्राचीन स्वरूप को प्रकट करती है। जैसे-

1 पाणिनि ने शब्दों के दो भाग माने हैं : सुबन्त और तिङन्त[xxvii], यास्क ने शब्दों के चार भाग माने हैं, नाम, आख्यात, उपसर्ग और निपात।[xxviii] पाणिनि ने सुबन्तों का एक भेद अव्यय किया है, पर यास्क ने नहीं। यास्क अगर पाणिनि के बाद होते तो उनके प्रभाव से अछूते न रह पाते तथा पदविभाग पाणिनि के अनुसार करते।

2 यास्क ने उपसर्गों की द्योतकता-वाचकता के प्रश्न पर गार्ग्य का नाम निर्देश करके उनका पक्ष लिया है तथा उपसर्गों को अविशेषेण नाम और आख्यातों से युक्त होने वाला बताया है।[xxix] उन्होंने उपसर्गों के गति, कर्मप्रवचनीय आदि अवान्तर भेद नहीं किये हैं। पाणिनि उपसर्गों को केवल क्रियायोगी मानते हैं।[xxx] उन्होंने उपसर्ग शब्दों के निपात, गति, कर्मप्रवचनीय आदि विभिन्न भेद भी बनाए है।

इससे सिद्ध होता है कि यास्क का विवेचन पाणिनि के विवेचन से प्राचीन है। यदि पनाणिनि यास्क से प्राचीन होते तो यास्क उनका भी नामनिर्देश उसी प्रकार करते, जिस प्रकार उन्होंने गार्ग्य का नामनिर्देश किया है।[xxxi]

3 पाणिनि की अष्टाध्यायी में एक प्रकरण विशेष में विहित द्वित्व के पहले अंश को ही अभ्यास[xxxii] कहा गया है तथा दोनों को अभ्यस्त।[xxxiii]

निरुक्त में अभ्यास का अर्थ 'आवृत्ति' है चाहे वह पारिभाषिक द्वित्व हो या पुनरुक्ति। विशेष स्थितियों में विहित द्वित्व का पहला अंश अभ्यास यह अर्थ निरुक्त में नहीं है। अभ्यस्त शब्द भी इसी प्रकार गुणित अर्थ में है, पाणिनि के पारिभाषिक अर्थ में नहीं।[xxxiv]

4 पाणिनि ने गुण-वृद्धि के निषेध स्थल को कित्, ङित्, गित्[xxxv] (क्ङित) से परिभाषित किया है। यास्क ने इसके लिए एक महासंज्ञा निवृत्ति स्थान का प्रयोग किया है।[xxxvi]

5 पाणिनीय शास्त्र में प्रत्यय शब्द प्रकृति के साथ लगने वाले तद्धित, कृत् आदि अंशों के लिए रूढ शब्द की तरह प्रयुक्त हुआ है। पाणिनि ने इसका लक्षण भी नहीं दिया है। इसका अर्थ यह हुआ

कि उनके समय में यह शब्द इस अर्थ में रूढ था। किन्तु निरुक्त में प्रत्यय शब्द प्रतीति[xxxvii] (ज्ञान) अर्थ में प्रयुक्त हुआ है तथा पारिभाषिक अर्थ में इसके स्थान पर कई अन्वर्थक, नामकरण, उपलब्ध, अन्तकरण शब्दों का प्रयोग किया है।[xxxviii] इससे सिद्ध होता है कि यास्क उस समय हुए जब भाषाशास्त्रियों में प्रत्यय शब्द इस पारिभाषिक अर्थ में शुरू ही नहीं हुआ था।

इस विवरण से यह निष्कर्ष निकलता है कि यास्क पाणिनि से बहुत प्राचीन हैं, यदि यास्क पाणिनि से अर्वाचीन होते तो वे पाणिनि जैसे मूर्धन्य वैयाकरण से प्रभावित हुए बिना नहीं रहते, तथा शब्दों की व्युत्पत्ति पाणिनि से भिन्न प्रकार से नहीं करते। पाणिनि के समय में शिक्षा में अधिक ह्रास होने लग गया था, लोग निरुक्तोक्त वैदिक विज्ञान भूलते जा रहे थे, भाषा में भी बड़े वेग से विकृति का प्रवाह चल पड़ा था। पाणिनि ने सोचा कि यह प्रवाह शिक्षा के ह्रास के कारण नैसर्गिक है। ऐसा भी कभी काल आ सकता है जबकि भाषा का वर्तमान स्वरूप बिल्कुल लुप्त हो जाए, तब आज के युग के (पाणिनि युग के) ग्रन्थों को कोई भी नहीं समझ सकेगा, इसलिए उन्होंने उस काल की भाषा के स्वरूप को स्थिर रखने के लिये व्याकरण की रचना की, जो आगे चलकर पाणिनीय व्याकरण के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस प्रकार के ह्रास के (आजकल के युग में विकास) लिए क्रमशः तीन सौ चार सौ वर्ष का समय अवश्य चाहिये, अतः हम यास्क को पाणिनि से पूर्व कलि की चतुर्थ शताब्दी का मान सकते हैं। अंग्रेजी तारीख के हिसाब से यह काल ईसा पूर्व 28वीं शताब्दी बैठता है। आधुनिक पाश्चात्य विद्वानों के मत से यास्क का काल ईसा से 700 वर्ष पूर्व है।[xxxix]

इस विषय में यह भी एक प्रमाण है कि- प्रसिद्ध महापुरुषों पाराशर्य और वासुदेव का कृष्ण नाम उनके काले रंग के कारण पड़ा था।[xl] काला रंग आर्यों में निकृष्ट माना जाता था। यास्क ने कृष्ण का अर्थ निकृष्ट वर्ण किया है। इससे सिद्ध होता है कि यास्क के समय तक कृष्ण राजनीतिक महत्त्व नहीं पाये थे। अन्यथा यास्क कृष्णो निकृष्टो वर्णः[xli] कहने की हिम्मत नहीं कर पाते।

निष्कर्ष- इस दृष्टि से यास्क का ग्रन्थ बहुत पुराने समय का प्रतिनिधित्व करता है। यास्क पाणिनि से बहुत प्राचीन और शतपथ से भी कुछ शताब्दी पहले महाभारत युद्ध से पूर्व के आचार्य है।

वास्तव में हमें अपने देश के इतिहास का अपने वाङमय के प्रकाश में सावधानी से पुनः समीक्षण करके समयनिर्धारण फिर से करना चाहिए देश के गौरव के लिए भी यह अत्यन्त आवश्यक है।

सन्दर्भ -

[i] पाणिनीय शिक्षा

[ii] नमो ब्रह्मणे। नमो महते भूताय। नमः पारस्कराय। नमो यास्काय। ब्रह्मशुक्लमसीय

[iii] लक्ष्मणसरूप, निरुक्त पाठ, पृष्ठ 244

[iv] आचार्य पाणिनि (500 ई.पू. तथा 350 ई.पू. के मध्य) पाणिनि के समय के विषय में विद्वानों का मतभेद है। वेवर तथा मैक्समूलर के अनुसार पाणिनि का समय 350 ई. पूर्व है। डॉ. गोल्डस्टुकर तथा भण्डारकर ने उनका समय 500 ई. पूर्व माना है। सत्यव्रत सामश्रमी ने 2400 ई. पूर्व बतलाया है। पं. युधिष्ठिर मीमांसक 2800 वि. पूर्व मानते हैं। सभी विद्वानों ने अपने मत की पुष्टि के लिए युक्ति तथा प्रमाण प्रस्तुत किये हैं। फिर भी यह निश्चित रूप से कहना कठिन है कि पाणिनि का समय क्या है।

[v] पारस्करप्रभृतीनि च संज्ञायाम्। अ. 6.1.157

[vi] आचार्य पतञ्जलि (200 ई.पू. तथा प्रथम ई. शती के मध्य) डॉ. वेलवल्कर ने पतञ्जलि का समय 150 ई. पूर्व माना है। पं. युधिष्ठिर मीमांसक ने उनका समय 1200 ई. पूर्व के लगभग माना है।

[vii] पारस्करो देशः। महाभाष्य, भाग-4, 6.1.157

[viii] काशिका 6.1.157

[ix] निरुक्त पञ्चाध्यायी, छज्जूरामशास्त्री (भूमिका, पृ. 28)

[x] स्कन्धस्वामी, स्कन्धभाष्य, भाग 3-4 (भूमिका)

[xi] बृहद्देवता, मैकडालन (भूमिका, पृ. 22)

[xii] शिवनारायण शास्त्री, निरुक्त मीमांसा (अध्याय-8, पृ. 68)

[xiii] वंशब्राह्मण, 14.6.5.21, 14.7.3.27

[xiv] यस्कादिभ्यो गोत्रे, अष्टाध्यायी 2.4.63 तथा 4.1.112 शिवादिगण (गणपाठ) में 70वाँ शब्द 'यस्क'। इन दोनों स्थलों में 'यस्क' से अपत्यार्थ में अण् प्रत्यय करके 'यास्क' शब्द सिद्ध किया गया है।

[xv] शिवनारायण शास्त्री, निरुक्त-मीमांसा, अध्याय-8, पृ. 69

[xvi] वाजसनेय प्रातिशाख्य, 1.27

[xvii] पाणिनि, थि. गोल्डस्टुकर (चौखम्बा संस्करण), पृष्ठ 239-240 पर उद्धृत Ancient Sanskrit Literature पृष्ठ 163 (चौखम्बा संस्करण, पृष्ठ 144)

[xviii] Ancient Sanskrit Literature (चौखम्बा संस्करण, पृष्ठ 122)

[xix] तत्र नामानि- आख्यातजानि-इति शाकटायनः। निरुक्त, 1.4

[xx] शिवनारायण शास्त्री, निरुक्त-मीमांसा, पृ. 69

[xxi] सत्यव्रत सामश्रमी, निरुक्तालोचन, पृष्ठ 103

[xxii] शिवनारायण शास्त्री, निरुक्त-मीमांसा, पृ. 69

[xxiii] यास्क, निरुक्त, 12.7

[xxiv] सूर्यागस्त्ययोश्छे च ङ्यां च, कात्यायन वार्तिक

[xxv] कात्यायन, वार्तिक

[xxvi] Yaskas Niruktt, विष्णुपद भट्टाचार्य, पृष्ठ 5-6

[xxvii] सुप्तिङन्तं पदम्, अष्टाध्यायी, 1.4.14

[xxviii] चत्वारि पदजातानि, नामाख्याते चोपसर्गनिपातश्च। यास्क, निरुक्त, 1.1

[xxix] नामाख्यातयोस्तु कर्मोपसंयोगद्योतका भवन्ति। यास्क, निरुक्त (1.1)

[xxx] उपसर्गाः क्रियायोगे, अष्टाध्यायी, 1.4.59

[xxxi] तुलनीय - गोल्डस्टुकर, पाणिनि, पृष्ठ 243-245

[xxxii] पूर्वोऽभ्यासः, अष्टाध्यायी, 6.1.4

[xxxiii] उभे अभ्यस्तम्, अष्टाध्यायी 6.1.5

[xxxiv] पारिभाषिक अर्थ के लिए 'अभ्यास' : निरुक्त 2.2.3, 5.12 / आवृत्ति सामान्य अर्थ के लिए निरुक्त 10.42 - 'अभ्यस्त' शब्द पारिभाषिक द्वित्व अर्थ में 2.12, 4.23, गुणित अर्थ के लिए, निरुक्त 2.10

[xxxv] क्ङिति च, अष्टाध्यायी, 1.1.5

[xxxvi] यास्क, निरुक्त, 2.1

[xxxvii] यास्क, निरुक्त, 1.15

[xxxviii] नामकरण, निरुक्त, 1.17, 2.2, 5, 6.22, 7.29, 10.17, उपबन्ध, निरुक्त, 1.7.8, 6.16 , अन्तकरण, निरुक्त, 1.13

[xxxix] छज्जूरामशास्त्री, निरुक्त पञ्चाध्यायी (भूमिका, पृ. 28)

[xl] महाभारत, आदिपर्व, गीताप्रेस संस्करण, 104.15

[xli] कृष्णो निकृष्टो वर्ण:, यास्क, निरुक्त, 2.20